अक्षय तृतीया के महोत्सव पर

भगवान श्रीकृष्ण की अक्षय कृपा
महाभारत की एक कथा पर आधारित

अपने ज्येष्ठ भ्राता युधिष्ठिर के नेतृत्त्व में, नीति परायण पाण्डव भाई, हस्तिनापुर साम्राज्य के उत्तराधिकारी थे। उनका चचेरा भाई दुर्योधन, उनके सौभाग्य से ईर्ष्या करता था और उसने छल-कपट से उनका राज्य छीनकर, उन्हें बारह वर्षों के लिए देश से निर्वासित करके वनवास भेज दिया।

वनवास के दौरान, पाण्डवों ने बहुत कष्ट उठाए। बीहड़ वनों में जीवन व्यतीत करते हुए उन्होंने सर्दी और गर्मी दोनों ही सहन किए, और वहाँ भोजन भी दुर्लभ था। वनवास के आरम्भिक दिनों में, युधिष्ठिर ने सूर्य देव से वरदान पाने के लिए प्रार्थना की। युधिष्ठिर की प्रार्थना सुनकर, सूर्य देव आकाश से उनके सामने प्रकट हुए। उनका कवच स्वर्णिम अग्नि का था और उनके हाथ में एक अद्‌भुत प्याला था, जो स्वयं सूर्य के समान ही चमकदार और उज्ज्वल था, यह अक्षय पात्र था।

“हे! ज्येष्ठ पाण्डु पुत्र, यह दिव्य पात्र ग्रहण करो। यह ईश्वर की अक्षय कृपा का प्रतीक है। इस पात्र से तुम्हें और तुम्हारे भाइयों को नित्य भोजन प्राप्त होगा। तुम सबके भोजन कर लेने के पश्चात् अन्त में ही तुम्हारी पत्नी, द्रौपदी को अपना भोजन ग्रहण करना होगा। मैं तुम्हें वचन देता हूँ कि इस प्रकार भोजन करने से, तुम्हारे परिवार को कभी भी भूखा नहीं रहना पड़ेगा।”

सूर्यदेव द्वारा दिए गए उपहार के लिए पाण्डव उनके प्रति कृतज्ञ थे और प्रतिदिन अक्षय पात्र से अपना भोजन ग्रहण कर के उनके आदेश का पालन करते थे। सबके भोजन ग्रहण कर लेने के पश्चात् ही द्रौपदी अपना भोजन करती थीं। इसके बाद वह पात्र दूसरे दिन सुबह तब तक खाली रहता था, जब तक कि आश्चर्यजनक रूप से उसमें दोबारा भोजन नहीं आ जाता था।

इस दौरान, दुष्ट दुर्योधन ने दूसरी चाल चली। वह इस बात से अनजान था कि युधिष्ठिर के परिवार के पास अक्षय पात्र है और वह समझता था कि वे लोग भिखारियों की तरह रहते होंगे। जिस वन में वे रहते थे वह निर्जन था, और वे लोग बाँस के बेंत तथा टहनियों से बनी एक साधारण सी झोपड़ी में सोते थे। उनके पास तन ढँकने मात्र के लिए ही वस्त्र थे।

इसलिए दुर्योधन ने उनकी इस अवस्था का लाभ उठाने की योजना बनाई। कई सप्ताहों से वह मुनि दुर्वासा, जो एक तेजस्वी ऋषि थे, उनके प्रति सम्मान प्रकट कर रहा था। उनसे वरदान प्राप्ति की आशा में वह उनके तथा उनके दस हज़ार शिष्यों के लिए भोजन का प्रबन्ध करता रहा। दुर्वासा मुनि, अपने क्रोध के लिए विश्वभर में प्रसिद्ध थे। थोड़ा-सा अनादर होने पर भी वे श्राप दे देते थे। उनके क्रोध से राजा और देवता, समान रूप से डरते थे। फिर भी दुर्योधन की सेवा से सन्तुष्ट होकर उन्होंने कहा, "मैं तुमसे प्रसन्न हूँ। तुम जो माँगोगे, तुम्हें वह दिया जाएगा।"

अपने शत्रुओं के विनाश की सम्भावना से उत्साहित, दुर्योधन इसी क्षण की प्रतीक्षा कर रहा था। वह जानता था कि एक अतिथि के रूप में ऋषि का स्वागत करने और उनके शिष्यों को भोजन करा पाने में पाण्डव असमर्थ थे। फलस्वरूप, दुर्वासा मुनि निश्चित ही पूरे परिवार को श्राप दे देंगे। दुर्योधन ने झूठी सज्जनता दिखाते हुए दुर्वासा मुनि से कहा, "हे महर्षि! हे योगीराज! कृपा करके वन में पाण्डवों को दर्शन दें। वे मेरे मित्र हैं और बड़े धर्मात्मा हैं। आपके दर्शनों से वे बहुत प्रसन्न होंगे। कृपया उनके यहाँ पधारें और उन्हें आशीर्वाद प्रदान करें।" ऋषि सहमत हो गए और अगले ही दिन अपने दस हज़ार शिष्यों के साथ पाण्डवों से मिलने चल दिए।

ऋषि को आते देख, युधिष्ठिर अपने भाइयों के साथ उनका स्वागत करने के लिए आगे बढ़े। उन्होंने हाथ जोड़कर ऋषि का स्वागत किया और कहा, "हे ऋषिवर! आप कृपया नदी में स्नान कर लें, फिर आप अपने शिष्यों सहित भोजन के लिए पधारें।"

द्रौपदी, सभी राजकुमारियों में एक जगमगाते हुए रत्न के समान थीं। वनवास के कई वर्षों के दौरान वह पाण्डवों के गुरु, भगवान कृष्ण की भक्ति में निरन्तर लगी रहती थीं। उन्होंने साहसपूर्वक कई चुनौतियों का सामना किया था। फिर भी जब उन्होंने दुर्वासा मुनि को अपने हज़ारों शिष्यों के साथ वन में उनकी कुटिया की ओर आते देखा, तो वे भय से काँप उठीं। उन्होंने अभी-अभी अपना भोजन समाप्त ही किया था और अक्षय पात्र खाली हो चुका था! भूखे ऋषि और उनके शिष्यों को भोजन कराना असम्भव था।

द्रौपदी दौड़कर अपनी कुटिया में गइ-और घुटनों के बल गिरकर बड़ी व्याकुलता से भगवान कृष्ण की स्तुति करने लगीं।

" हे श्री कृष्ण,
जिनकी शक्ति अपरम्पार है,
आप व्यथितों के कर्मठ नायक हैं,
समस्त विश्व और सृष्टि के पालनहार हैं,
आप महान से भी महानतम हैं, सबके सर्वोत्कृष्ट आश्रय हैं!

हे देवों के देव, आपके शरणागत होने पर
सभी भयों से मुक्ति मिल जाती है
आपने पहले भी मेरी अनेक बार रक्षा की है
इस संकट से आप ही मेरी रक्षा कीजिए।"

द्रौपदी की प्रार्थना सुनकर भगवान कृष्ण, तत्काल ही उनके सामने प्रकट हो गए। वे समस्त दिव्य लोकों से भी अधिक तेजोमय थे तथा सत्य और धर्म के मूर्तरूप थे। उन्होंने द्रौपदी से कहा, "मैं बहुत भूखा हूँ ! जल्दी करो ! मेरे लिए कुछ खाने को लाओ!"

द्रौपदी भौंचक्की रह गइ,-और प्रार्थना करने लगीं, "किन्तु मेरे प्रभु! यहाँ तो कुछ भी भोजन शेष नहीं है! अक्षय पात्र खाली है, और दुर्वासा मुनि हम पर क्रोध करेंगे! कृपया मेरी सहायता कीजिए।"

भगवान कृष्ण ने पुनः उन्हें आदेश दिया, "जल्दी करो, जल्दी करो! मेरे पेट में चूहे कूद रहे हैं। सूर्य देव का पात्र मेरे पास ले आओ! उसमें कुछ न कुछ अवश्य बचा होगा!"

इस व्याकुलता से द्रौपदी स्तब्ध थीं। क्या उनके परम प्रिय भगवान गम्भीर थे? क्या वे अपनी कोई लीला कर के उनके साथ परिहास कर रहे थे? इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता। भगवान श्रीकृष्ण में उन्हें पूर्ण विश्वास था, उन्होंने सोचा, "भगवान में विश्वास रखना और उनकी आज्ञा का पालन करना मेरा धर्म है। वे तो अप्रत्यक्ष को प्रत्यक्ष रूप से देखते हैं और असम्भव को भी सम्भव बना देते हैं। मैं स्वयं को उनकी आज्ञा के प्रति समर्पित करती हूँ।" इसी भावना के साथ, उन्होंने अक्षय पात्र लाकर उन्हें दे दिया। सबके हृदयों में निवास करने वाले भगवान श्रीकृष्ण ने पात्र के किनारों पर अपनी अंगुली घुमाई और पाया कि पात्र खाली नहीं था। उसमें चावल का एक दाना लगा हुआ था। उन्होंने स्वाद लेते हुए उस दाने को बड़े आनन्द से खा लिया। फिर उन्होंने पुकारा, "हरि, जो ब्रह्माण्ड की आत्मा हैं, इस भेंट से तृप्त हो जाएँ।"

भीम, जो पाण्डवों में सबसे बलशाली थे, इस दिव्य लीला को देख रहे थे। भगवान श्री कृष्ण ने उनकी ओर मुड़ते हुए कहा, " शीघ्र जाओ और दुर्वासा मुनि तथा उनके शिष्यों को भोजन ग्रहण करने के लिए बुला लाओ।"

इसी बीच, नदी में स्नान कर रहे दुर्वासा मुनि और उनके शिष्यों की भोजन की इच्छा अकस्मात् ही समाप्त हो गई। एक शिष्य ने पूछा, " हे महर्षि, अब हम क्या करेंगे? हमारा पेट तो गले तक भरा हुआ लग रहा है। पाण्डवों के यहाँ भोजन करना तो असम्भव है।" ऋषि ने उत्तर दिया, "एक बार निमन्त्रण स्वीकार करने के बाद फिर अस्वीकार कर के हमने एक गम्भीर गलती कर दी है। युधिष्ठिर और उसके भाई धर्मात्मा हैं किन्तु वे योद्धा भी हैं। इस बुरे आचरण से वे क्रोधित हो जाएँगे। उनके वापस आने से पहले ही हमें यहाँ से चले जाना चाहिए।"

भगवान कृष्ण के निर्देशानुसार, भीम नदी पर गए और देखा कि दुर्वासा मुनि और उनके शिष्य शीघ्रतापूर्वक पाण्डवों की कुटिया से दूर भागे जा रहे थे। युधिष्ठिर ने अपने छोटे भाई से पूछा कि यह सब कैसे सम्भव हुआ। तब भीम ने उन्हें भगवान श्री कृष्ण की लीला के बारे में बताया। तत्काल ही पाण्डव, अपने श्रीगुरु श्री कृष्ण के दर्शन की आशा से अपनी कुटिया में गए।

धन्य हैं प्रभु! एक मनमोहक मुस्कान के साथ उन्होंने सबका स्वागत किया। द्रौपदी ने बताया कि कैसे भगवान कृष्ण वहाँ प्रकट हुए और उन्होंने किस प्रकार अक्षय पात्र में बचे हुए चावल के उस एक दाने का स्वाद लिया। कृतज्ञता से पाण्डवों की आँखें आँसुओं से भर गईं और उन्होंने भगवान कृष्ण के समक्ष अपना सिर नवाया।

भगवान कृष्ण ने कहा, "द्रौपदी की करुण प्रार्थना के कारण ही, मैं यहाँ उपस्थित हुआ हूँ। यद्यपि चावल के एक दाने की उसकी भेंट बहुत ही साधारण थी, परन्तु उसके विश्वास और भक्ति ने मुझे प्रसन्न कर दिया। मुझमें उसका विश्वास अटल था। जब कोई व्यक्ति प्रेम पूर्वक किए गए अपने कर्तव्य को ईश्वर को समर्पित करता है, तब उसके छोटे से छोटे सत्कर्म में भी कई लोगों का उत्थान करने की शक्ति होती है।

"द्रौपदी ने, आप पाण्डवों के समान ही अपने धर्म का निर्वाह किया है। सदैव याद रखना कि अक्षय पात्र के समान ही ईश्वर की कृपा भी शाश्वत एवं अनन्त है। और धर्मात्मा जो ईश्वर की शरण लेते हैं, उनकी निश्चित ही विजय होती है। अब मैं वापस जाऊँगा। यशस्वी भव!"

युधिष्ठिर ने भगवान श्री कृष्ण से कहा, "हे प्रभु! आप शान्ति के स्त्रोत हैं तथा सौभाग्य के निवास स्थल हैं। आपको हमारा बारम्बार प्रणाम। हम हमेशा हृदय से आपका स्मरण करते रहेंगे!"

समस्त प्राणियों का अस्तित्व, अनन्त ईश्वर में ही है। वास्तव में, भगवान कृष्ण के चावल के केवल एक दाने से सन्तुष्ट हो जाने के कारण दस हज़ार व्यक्तियों की भूख मिट गई और अप्रत्याशित तरीके से पाण्डवों की रक्षा हुई।

****

अक्षय तृतीया के विषय में

परम्परा के अनुसार, सूर्यदेव ने पाण्डवों को दिव्य पात्र, अक्षय तृतीया के दिन ही दिया था। अक्षय तृतीया, भारतीय पंचांग के साढ़े तीन पवित्रतम दिनों में से एक है। महर्षि वेद व्यास ने **महाभारत** *की रचना भी इसी पवित्र दिन पर आरम्भ की थी। आनन्द और प्रचुरता का यह समय, नई परियोजनाओं को आरम्भ करने तथा आध्यात्मिक अभ्यासों को करने के लिए शुभ होता है।*

****

© २०१६ एस.वाय.डी.ए फ़ाउण्डेशन ® ।सर्वाधिकार सुरक्षित।